महाश्वेतादेवी के दुष्कर उपन्यास में सामाजिक बोध

डॉ. मंजूर सैय्यद , कल्पना माळी

शोधार्थी, हिंदी विभाग के. टी. एच. एम. कॉलेज नाशिक

महाश्वेतादेवी का परिचय :–

महाश्वेता देवी बांग्ला साहित्यकार एवं सामाजिक कार्यकर्ता है। उनका जन्म १४ जनवरी १६२६ को भारत के ढाका शहर में हुआ । साहितियक तपश्चर्या के आधारपर इन्हें १६६६ में ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया। उनके साहित्य का पटल व्यापक है।

अ : उपन्यास साहित्य :–

१ - नटी

२ - अग्निगर्भ

३ - झॅासी कि रानी

४ - मर्डरर कि मॉ

५ - १०८४ कि मॉ

आ : कहाणी संग्रह :–

१ - स्वाहा

२ - रिपोर्टर

अन्य साहित्य :–

लघुकथाएं :– १) मीलू के लिए २) मास्टर साब

ई : आत्मकथा :– १) उम्रकैद २) अक्लांत कौरव

उ : आलेख :– १) कृष्ण द्वादशी २) अमृत संचय ३) घहराती घटाएॅ

यात्रा संस्मरण :– १) श्री श्री गणेश महिमा २) ईंट के उपर ईंट

नाटक :– १) तेरोदैक्तील २) दौलती

सामाजिक बोध :–स्वरुप– साहित्यिक अपनी प्रबल सूक्ष्म, निरीक्षण क्षमता के कारण समाज भितर का बोध करता है, और आत्मन्थन चिंतन के पश्चात उसे साहित्यकर्म के माध्ये से समाज समुख पेश करता है। समाज का दायित्व साहित्य रचना व्दारा वह वहन करता है। ऐसे सामाजिक बोध के संदर्भमें महाश्वेतादेवी के विचार है कि

"मेरा विश्वास निर्माण और निर्मित में है, जो मैं आज भी सीख रही हूँ। जो सब उपदान किताबें पढ़कर, जनमानस से परिचित होकर, पैदल–पॉव, घूम–फिरकर जूटाती हूँ, वह मेरे मन के पन्नों में दर्ज हो जाता है। इसमें जादू का अहसास भी शामिल है। असल में प्रत्यक्ष तजुर्बो की हमेशा जरुरत नही पड़ती। वैसे क्षमता का दायरा भी छोटा है। मैं उसमें विश्वसनीयता गढ़ने का प्रयास करती हूँ। मेहनत अन्वेषण और नित्यप्रती सीखते रहने का सिलसिला, आज भी खत्म नहीं हुआ। मुझे नहीं लागता कि प्रत्यक्ष अभिज्ञता ही आखिरी बात है। मैं कहीं पहुँचना चाहती हूँ, इसीलिए मैं निरतर चलती रहती हूँ। अध्ययन, ग्रहण और सतत जागरूक मन के जरिए, मै कथावस्तू को पकडने की कोशिश करती हूँ। ये सब अभिज्ञता मेरे मन में पलती–बढ़ती रहती है। मेरे मन को मथती रहती है। यही मेरी आस्था, मेरा विश्वास है। जिस दिन यह सब 'ना' हो जाएगा, मैं भी 'ना' हो जाऊँगी ।,

अर्थात साहित्यकार रचना प्रक्रिया उसे आराम से बैठने नही देती, निंरतर उसके मन में मन्थन चलते रहता है, जीवन के अंतिम पल तक यह प्रक्रिया रहती है। यह सभी साहित्यकार को संदर्भ में होता है।

दुष्कर उपन्यास में सामाजिक बोध :–

भारतीय संस्कृती है कि परिवार मे कुछ समस्या आती है तो उसका कारण औंरत को बताया जाता है। इस उपन्यास मे भी एक गौण पात्र मोहन और नीलम विवाहित दामपंत्य थे। अपनी पत्नी से बाल बच्चे होने की कोई संभावना नहीं थी। तो उसे छोड देना ही समस्या का निवारण समजा गया है। क्योकी यह पुरुष प्रधान संस्कृती मानी जाती है। जिसमें सभी दोष स्त्री वर्गो को दिये जाते है। जैसे की सूशिल और सीमा का प्रसंग है। "सुशील का दोस्त पार्थ, करीब तीन साल तक घुमता फिरता रहा। ब्याह से पहले हि सीमा प्लूरीसी की शिकार हो गई, इसलिए एक ही जुमले में वह शादी तोड़कर चला आया।" २

मुख्य पात्र सुशील का दोस्त पार्थ, तीन साल से सीमा से प्यार करता है। उसे अपनी जीवनसाथी बनाना चाहता है। उसे एक दिन अचानक से प्लूरीसी नामक बिमारी हो जाती है। तो उसे पार्थ छोड देता है। यह पार्थ ने बिल्कुल ठीक किया। लव मी और लव माई डिजीज 'हुह मुझे प्यार करो, मेरे रोग को भी प्यार करो। भला ऐसा कही होता है? ऐसा कहता है। उसके साथ उसके अन्य दोस्त कल्पिता 'रवि, सैकेत हरित सुशील के किसी भी बंधु–बांधव कि नजरों में पार्थ का यह व्यवहार अस्वाभाविक नहीं लगा था। "सुशील ने कहा, यह सब द्या, सहनशीलता उदारता इन्हीं

सबकी वजह से बंगाली क़ौम मरती जा रही है, बेजान होती जा रही है इन तथा कथित गुणों के प्रति जरुरत से ज़्यादा प्यार, एक बिमारी है। किसी भी चीज को प्यार नहीं करना चाहीए, कम से कम उस ढंग से नहीं।'' ३

वह हर समस्या में खुद को अनुभव करती है और खुद सोचती है। जिसे हम इतने दिनो से जनते है पहचानते है उसे स्नेह करते है। उसे हम कैसे कुछ रोग या बिमारी के वजह छोड़ सकते है। जिस प्रकार हमारे शरीर का एक अवयव खराब हो गया तो क्या हम उसे तुरंत तोड देते है! नही क्योंकि वह अवयव अपना होता है। उसी प्रकार मनुष्य खुंद से अधिक स्नेंह किसीसे नही करता, वह एक प्रकार की औंपचारिकता होती है। यह समजाने कि कोशिश लेखीका करती है तो उसे क़ौम का गुन्हेंगार माना जाता है। ''काफी देर से यूं बैठे–बैठे, मीरा के गर्द, गिर्द जो स्तब्धता ठहरी हुई थी, वह मानो जम गई थी। कमरे का एक कोना जैसे–तैसे धुला हुआ। वहा लकड़ियों का बंडल, बालू, सिकोरा! मिट्टी की हंड़िया में कागज़ों की चंद पुडिया'। ५

सत्येश की पत्नी शादी के बाद अचानक से बिमार हो जाती है। अपना होश खो जाती है। उसकी हरकते पागल जैसे हो जाती है। कभी वह बडबड़ाती है। कभी वह खुद को भूल जाती है ,अपने पती कोभी नही पहचान ती। सत्येश उसे अस्पताल में दिखाता है। लेकिन मनुष्य का स्वभाव है की वह जब तक खुद देखता नही तब तक वह विश्वास नही करता। उस तरह मीरा के माता–पिता ने सत्येश के कहने पर विश्वास नही किया। मीरा की मॉ उसे अपने साथ कलकत्ता ले गई और काफी दिनो तक दैव इलाज करती रही। इस वक्त व्यक्ति कि खुद की सोच कमजोर हो जाती जो बताता हे, वैसे मीरा कि मॉ अपनी बेटीको सुधार ने के लिए करती है। उनके मन एक हि उम्मीद है कि मेरी बेटी अच्छि हो जाय। इसके लिए वह अस्पताल की तक दवाईयॉ बंद कर देती है। जाने कहा कहा के कंगन, धागा, कहा कहा की दवाईयॉ देती है। मनुष्य स्वभाव होता है, की अंधश्रद्धा का अभाव लेकर मनुष्य को डराया जाता है, और मनुष्य डरता है। किसी भी बात पर विश्वास रखता है। उसी प्रकार वर्तन करता है, उस वक्त वह सब कुछ भूल जाता है,अच्छा, बुरा, सही, गलत, और भय के कारण अंधश्रद्धा की और चला जाता है।

"अपने निजी मकान में आराम से रहती हो न, तुम्हें भला क्या अंदाज हो सकता है? अरे, हां, पूवाली, तुम्हारे वे कौन तो हैं न? फ्लैट–प्लैंट देने के मलिक है"। ६

सुशील एक ऐसा व्यक्ति जो हर बात में अपना फायदा देखता है। वह एक स्वार्थी व्यक्ति हैं वह अपने स्वार्थ के लिए अपनी जिम्मेंदारी तक छोड देता है। अपने पिता के मृत्यू के बाद अपने मॉ की जिम्मेंदारी अपनी छोटी बहनो पर डाल देता है। दोन्हों बहने पेट पालने के लिए नोकरी करती है, और अपने मॉ कोभी संभालती है। सुशील पूवाली के पिछे भी अपने स्वार्थ के लिए लगता है, और उसे प्रेम करने के लिए मजबूर करता हैं। क्योंकि पूवाली एक पढ़ी लिखी नोकरी करने वाली लड़की

है। उसके फूफा फ्लैट के मालिक है, इस लिए पूवाली को कहते है, की तू बात करे तो वह उसे मिल जाए। वह पूवाली को अच्छि तरह समजता है की, उसके पास रहने के लिए घर है, लेकिन जिसके पास घर नही हो तो उसे क्या तकलीप होती है। वह पूवाली से कहता है कि उसने सेक्रेटरी जो उसने गॉव की है। उसे झुठ बोलकर कहता है कि वह और उसकी मॉ गाव की बस्ती मे पडे रहते है। यही सब बोल–बोलकर मैने जरा उसे पिघला लिया और सट से हाथों हाथ, एक एप्लिकेशन उनके हाथों में थमा दिया। जो मॉ उसके साथ तक नही रहती वह उसका भी इस्तेंमाल करके सहानभूती मिलाता है। वह अपने फायदे के लिए हर एक तरीका इस्तेंमाल करता है।

निष्कर्ष :– महाश्वेता के 'दुष्कर' उपन्यास मे उल्लेखित सामाजिक बोध से स्पष्ट है कि समाज व्यक्ति या परिवार अपने विकास हेतु अनेकानेक कर्म करते है जिसमें अपने और परायों के शोषन भी होता है। लेकिन स्वार्थता मनुष्य का चैन से जिने नही देती है और बेचैनी का शिकार होते हुए वह दुःखी होता है, जिवन में स्वार्थ हेतु 'दुष्कर' कार्य करने का भी व्यक्ति आगे पिछे नही देखता दुष्कर के सामाजिक बोध से स्पष्ट है। यह स्पष्ट होता है।

संदर्भ सूची :–

दुष्कर उपन्यास : पुष्ट क्र ६३
दुष्कर उपन्यास : पुष्ट क्र ३८
दुष्कर उपन्यास : पुष्ट क्र ३६
दुष्कर उपन्यास : पुष्ट क्र ४४
दुष्कर उपन्यास : पुष्ट क्र ६२